Volume I, Issue XXVII
July to September 2019

2019-20

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 5.610 (2018)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

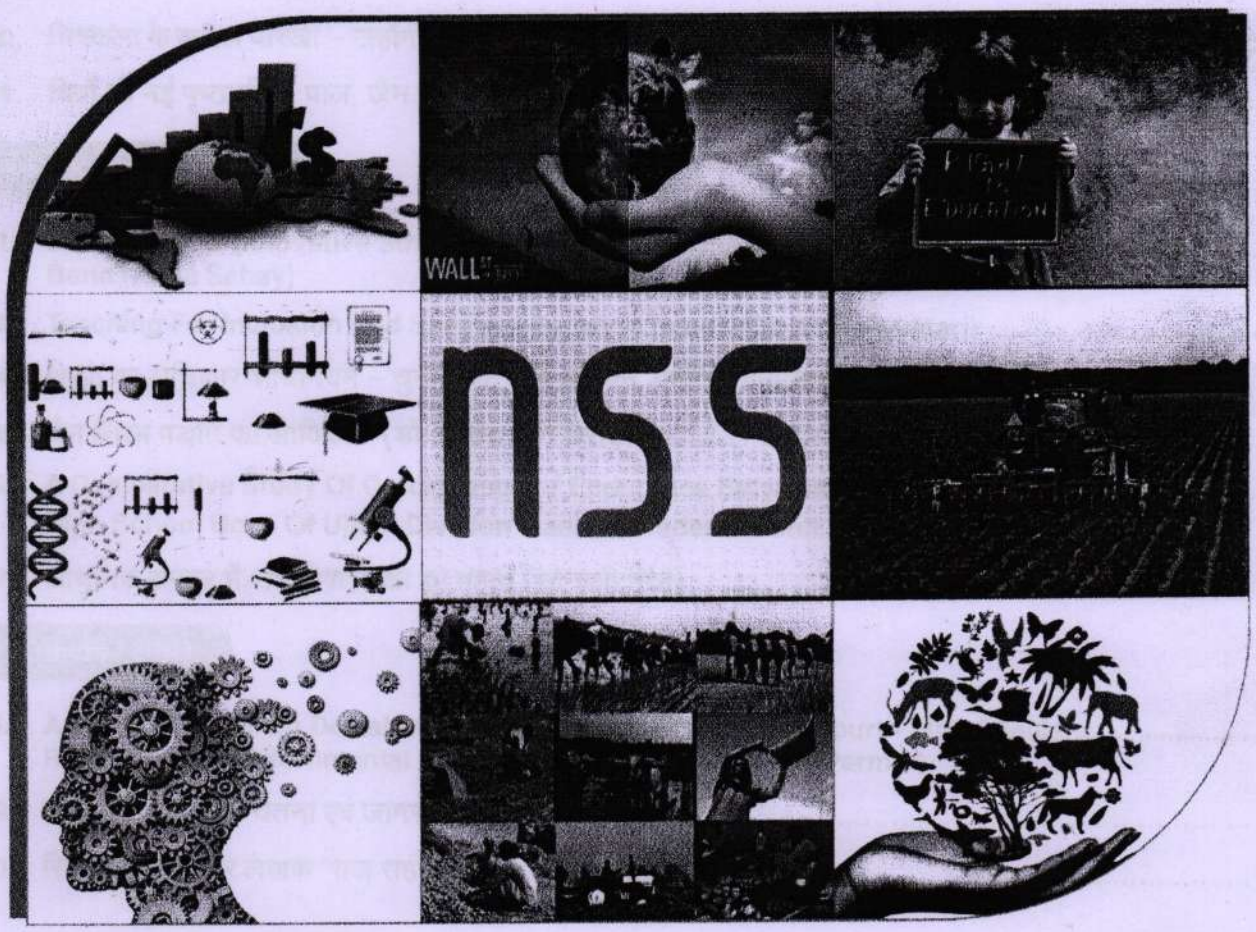

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, NEEMUCH (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, Email : nssresearchjournal@gmail.com, Website www.nssresearchjournal.com

(Sanskrit / संस्कृत)

38. शिशुपालवध महाकाव्य में 'सत्यं-शिवं-सुन्दरम्' का शाश्वत-स्वरूप (अनिल मुवेल) 109
39. विश्वनाथदेव विरचित साहित्यसुधासिन्धु में काव्य प्रयोजन विमर्श (डॉ. आराधना) 112

(Drawing / चित्रकला)

40. चित्रकला के कुशल पारखी – जहाँगीर (डॉ. निशा गुप्ता) 114
41. चित्रों की नई पृष्ठभूमि – पाल, जैन एवं अपभ्रंश शैली (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 118

(Education / शिक्षा)

42. Blending New Innovative Strategies In Teacher Education For Developing Teacher Learner Bond (Anita Sahay) 120
43. Teaching For Inclusion And Special Education Needs (Dr. Amita Kumari) 123
44. शिक्षा का अधिकार अधिनियम – चुनौतियाँ (डॉ. डी. एन. दानी, रंजना सालगिया) 126
45. जैन शिक्षा पद्धति का आदिकाल (डॉ. रूपेन्द्र मुनि अरोड़ा) 130
46. A Comparative Study Of Cardiovascular Endurance Between Government And Private High School Boys Of Ujjain Division Madhya Pradesh (Punit Gupta) 134
47. आधुनिक समाज में शारीरिक शिक्षा का महत्व (सोनाली सिंह) 136

(Others / अन्य)

48. An Impact Study On Decisional Jurisprudence Of Supreme Court - With Special Reference To Environmental Protection Laws In India (Anita Parmar) 138
49. पर्यावरण संरक्षण – चेतना एवं जागरूकता (डॉ. महुआ डे) 141
50. रियासी दा सिरमोर लेखक 'राज राही' (दविंदर सिंह) 144

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July To September 2019, Vol. I

चित्रों की नई पृष्ठभूमि - पाल, जैन एवं अपभ्रंश शैली

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना - 10 वीं से 15 वीं शताब्दी के बीच कला को जीवित रखने का श्रेय पाल शैली, जैन शैली एवं अपभ्रंश शैली को जाता है। लेकिन बदली हुई परिस्थितियों के कारण यहाँ की मानवाकृतियों में भाव व्यंजना की अद्भुत व्यंजना दिखाई नहीं पड़ती, लेकिन एक विशेष बात यह है कि इस समय कला भित्ति-चित्रों तक ही सीमित नहीं रही बल्कि कला ने सचित्र-पोथियों में अपना स्थान ग्रहण किया। इन पोथियों में तात्कालीन समय की गाथाए, कथायें एवं धार्मिक देवी-देवताओं के चित्र देखने मिलते हैं।

'मध्यकाल के आरम्भ में जो ताड-पत्रों पर लिखने व चित्र बनाने का काम हुआ है, उसे एक ही व्यक्ति करता था। परन्तु बाद में लिखने एवं चित्र बनाने का कार्य अलग-अलग व्यक्तियों ने करना प्रारम्भ कर दिया। ताड-पत्रों पर लिखित अब तक के ज्ञात ग्रंथों में सबसे प्राचीन ग्रंथ 'अधिनियुक्ति वृत्ति' माना जाता है, जो जैसलमेर के जैन ग्रंथालय में आज भी सुरक्षित रखा हुआ है, इसमें जो मानव आकृतियाँ अंकित हैं, उनमें कामदेव एवं श्री लक्ष्मीपूर्णघट प्रमुख हैं, इन चित्रों की शैली 'ठेठ' अपभ्रंश नहीं है। 14 वीं सदी के ग्रंथ चित्रों में कल्पसूत्र, महावीर चरित्र आदि प्रमुख हैं, जो शाह जैसलमेर के संग्रहालय में सुरक्षित रखे हुए हैं।

बड़ी-बड़ी दीवारों पर बनने वाली मानवाकृतियाँ अब लगभग 2 इंच लंबे तथा 2.5 इंच चौड़े ताड-पत्र पर संकुचित हो गई। इससे इन मानवाकृतियों के आकार तथा नाप-तौल में काफी अंतर आ गया। चित्रकार को इन मानवाकृतियों में भाव व्यंजना तथा सौंदर्य का समुचित प्रभाव लाने में कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। परिणाम यह हुआ की ये मानवाकृतियाँ कई स्थानों पर गुड्डे-गुड़ियों जैसी आकृतियों में दिखाई देती है। चेहरे पर आँखों को सवा चश्म दिखाया गया है, और परली आँखें बाहर निकली हुई अधर में लटकी रहती है। नाक नुकीली एवं आवश्यकता से अधिक लंबी बनाई गई है, जिसके कारण ये आकृतियाँ निर्जीव और बैडोल प्रतीत होती हैं।

इस युग के चित्रों में मूल रंग लाल, पीला, नीला, सफेद काला तथा मिश्रित रंगों में गुलाबी, हरा, बैगनी आदि रंगों का प्रयोग मिलता है, सोने का प्रयोग बहुत कम मात्रा में दिखाई देता है। 'सोमदेव' व 'क्षेमेन्द्र' (11वीं शताब्दी) कृत कथा सरितसागर के दोनों संस्करणों में यह देखने मिलता है कि तत्कालीन समाज में चित्रकला के प्रति गहरी अभिरूचि जागृत हो चुकी थी। यूँ कहें कि विद्वानों, राजाओं और जनसामान्य में चित्रकला का सर्वत्र प्रसार हो चुका था।

मध्यकाल को शैलीगत रूप में तीन भागों में बांटा जा सकता है -

1. पाल शैली,
2. जैन शैली,
3. अपभ्रंश शैली

पाल शैली (730-1197 ई.) - पाल शैली जिसका प्रमुख केन्द्र बंगाल था। अजंता शैली की मानवाकृतियों की तर्ज पर तत्कालीन चित्रकार धीमान तथा उसके पुत्र वित्तपाल ने इस शैली को कलात्मक दृष्टि से शिखर पर पहुँचाने का बीड़ा उठाया। तत्कालीन राजा धर्मपाल तथा देवपाल के संरक्षण में इस शैली का विकास हुआ। देवपाल के पुत्र नारायण पाल के समय में अनेक पाल पोथियों का चित्रण हुआ। चूंकि ये सभी सम्राट बौद्ध धर्म के अनुयायी थे, इसीलिए प्रमुख विषय महायान बौद्ध देवी-देवता तथा जातक कथाओं पर आधारित हैं। श्रेष्ठ मानवाकृति चित्र के अंतर्गत 'बुद्ध योग मुद्रा में कमल पर आसीन' इस समय का सर्वोत्तम उदाहरण है।

पाल शैली में भित्ति चित्र भी बनाए गए, इन भित्ति चित्रों में जिन मानवाकृतियों को रूप प्रदान किया गया है, उनमें बौद्ध भिक्षुणियों, नर्तक तथा पूजा करती नारी आदि शामिल हैं।

पाल शैली में अधिकांश मात्रा में जितने चित्र उपलब्ध हुए हैं, वे ताड-पत्र पर बने हैं, ये ताड-पत्र लगभग 2 इंच लम्बे तथा 2.5 इंच चौड़े होते थे। इन ताड-पत्र रूपी पृष्ठों से पोथियाँ तैयार होती थीं। इन पोथियों में बौद्ध धर्म संबंधी कथायें, देवनागरी की सुंदर लिपि से लिखी जाती थी। इन पृष्ठों के बीच-बीच में आयताकार या वर्गाकार स्थान खाली छोड़ दिया जाता था, जिनमें कथाओं से संबंधित देवी-देवताओं की मानवाकृतियाँ तैयार की जाती थीं। मानवाकृतियों के अधिकतर चेहरे सवाचश्म हैं, और एक ही तरह से बनाए गए हैं, सिर चपटे, नाक लंबी, आँखे बड़ी तथा कानों को स्पर्श करती हुई बनाई गई हैं। जिससे इन मानवाकृतियों में सजीवता एवं स्वच्छंदता का अभाव झलकता है। ये मानवाकृतियाँ एक दूसरे के अधिक निकट बनाई गई हैं, फलस्वरूप इनके हाथ एवं पैरों की मुद्राओं में अकड़न दिखाई देती है। इन मानवाकृतियों को बनाने में रेखाओं का प्रयोग गतिपूर्ण तो है लेकिन रेखाओं में उतार-चढ़ाव की भी कमी है।

जैन शैली - पाल शैली की तरह जैन शैली में भी मानवाकृतियाँ भाव व्यंजना की दृष्टि से निम्न स्तर की बनी हैं। यहाँ भी चेहरे सवा चश्म तथा लंबी नाक, कर्णस्पर्शी आँखे देखने मिलती हैं। जैन शैली के चित्र राजपूत शैली से एक शताब्दी पहले चित्रित किए गए। यहाँ की मानवाकृतियों में जैन धर्म से संबंधित देवताओं - पार्श्वनाथ, नेमीनाथ, ऋषभनाथ तथा तीर्थंकर महात्माओं आदि को दृष्टांत स्वरूप तैयार किया गया, जो जैन चित्रकला के सर्वाधिक प्राचीन उदाहरण हैं, इनका समय लगभग 7 वीं शताब्दी के आस-पास का माना जाता है।

भारतीय चित्रकला में मानवाकृतियों को जीवित रखने का श्रेय जैन कलाकारों को जाता है। जिन्होंने 10 वीं शताब्दी से लेकर 15 वीं शताब्दी

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत